

सितार वादन में बोलों का निष्पादन एवं छन्दोबद्ध रचना

डा० रितु सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर - सितार

कमला आर्य कन्या पी. जी. कालेज, मीरजापुर

उत्तर प्रदेश

Email: ritujeets@gmail.com

सारांश

वर्तमान युग में सितार एक ऐसा तन्त्री वाद्य है जिसमें कल्पना की उड़ान के लिए बड़ी गुंजाइश है। सुमधुर मूल स्वरों के साथ इस वाद्य में कलात्मक प्रस्तुतिकरण की एक अत्यन्त ही सुन्दर अभिव्यक्ति होती है। सितार वादन में कलात्मक प्रस्तुतिकरण हेतु सर्वप्रथम नियमबद्ध बोलों की योजना की गयी। इन्हीं बोलों से अनेक प्रकार की छन्दोबद्ध रचनाओं का निर्माण हुआ। अनेक प्रकार के गत, तान, तोड़े तथा लयकारियों का निर्माण इन्हीं बोलों के आधार पर किया गया है, जिसके द्वारा एक पूर्ण राग की अभिव्यक्ति सितार वादन में सम्भव हो सका। इस शोधपत्र को प्रस्तुत करने का मूल प्रयोजन सितार वादन में कलात्मक प्रस्तुतिकरण हेतु प्रयुक्त विभिन्न बोल एवं इनसे निर्मित छन्दोबद्ध रचनाओं का निरूपण करना है जो सम्पूर्ण राग के स्वरूप को खड़ा करने में अहम भूमिका निभाते हैं।

मुख्य बिंदु -मिजराब के मूलबोल, छन्दोबद्ध बोल, छन्दोबद्ध रचना, मसीतखानी गत, रजाखानी गत।

किसी भी वाद्य को बजाने के लिए उसमें प्रहार से उत्पन्न कुछ मूल बोल होते हैं, इन्हीं मूल बोलों में आपस में फेरबदल कर अनेक प्रकार की छन्दोबद्ध रचनाओं का निर्माण होता है। तन्त्री वाद्यों को बजाने के लिए तन्त्री पर आघात करने से जो प्रतिध्वनि निकलती है, वह 'बोल' कहलाती है।¹ तन्त्री वादन में प्रारम्भ से ही वीणा का प्रमुख स्थान रहा है। इतिहास से यह ज्ञात होता है कि पहले वीणा का प्रयोग गायन की संगति हेतु किया जाता था परन्तु जब वीणा का स्वतन्त्र वादन आरम्भ हुआ तो सर्वप्रथम वीणा में नियमबद्ध क्रियाओं तथा क्रमबद्ध बोलों का नियोजन किया गया। तत्पश्चात् बोलों के सम्मिश्रण से वादन को अलंकृत करने हेतु अनेक सौन्दर्य उपकरणों एवं छन्दोबद्ध रचनाओं का निर्माण हुआ, इसी का अनुकरण सितार वाद्य में भी किया गया।

“बोलों” का आधार ‘तारपरन’ क्रिया को माना गया है। हमारे पूर्वजों ने जब पखावज की परनों को वीणा पर बजाया तो इसी क्रिया को ‘तारपरन’ की संज्ञा दी। वीणा पर किसी परन को ठोकने से जो मिजराब कटी उसी को

¹ नागपाल, अलका एवं गोयल, सपना। भारतीय संगीत के प्रमुख तन्त्री वाद्य सितार एवं सरोद, पृ० 95

[illegible]

डॉ० लालमणि मिश्र जी ने अपने ग्रन्थ ‘भारतीय संगीत वाद्य’ में यह उल्लेख किया है कि “सितार का वादन मिजराब से होता है एवं इसका मूल बोल दा डा अथवा दा रा हैं.” सितार में बाहर से भीतर की ओर का प्रहार ‘दा’ तथा भीतर से बाहर की ओर का प्रहार ‘रा’ कहलाता है . अर्थात् दा में मिजराब की अंगुली सिकुड़ती है तथा रा में फैलती है. सितार में बाहर से अन्दर की ओर प्रहार करने को आकर्ष क्रिया एवं अन्दर से बाहर की ओर प्रहार करने को अपकर्ष क्रिया कहते हैं.¹

सितार के मूल बोल तो 'दा' और 'रा' ही हैं किन्तु इसी बोल (दा और रा) के सम्मिश्रण से एक बोल 'दिर' का भी निर्माण होता है। इस प्रकार सितार के प्रमुख बोल तीन हैं, यथा-

1. दा
2. रा
3. दा + रा = दिर

उपर्युक्त इन्हीं तीनों बोलों में सम्पूर्ण सितार वादन समाहित है। बोलों के इन्हीं रूपों के संयोग से विभिन्न प्रकार के बोलों की निर्मिति हुई है, जो कि क्रमशः एक मात्रा, डेढ़ मात्रा, एक चौथाई मात्रा आदि काल में बनाए जाते हैं, जिन्हें क्रमशः दारा अथवा दिर, द्रा, दाऽरा, द्राऽऽर, दाऽऽर के नाम से जाना जाता है। इसके अतिरिक्त चतुर्मात्रिक, षष्टमात्रिक तथा अष्टमात्रिक छन्दोबद्ध बोल निर्मित होते हैं। यहाँ पर एक मात्रा, डेढ़ मात्रा तथा एक चौथाई मात्रा काल में निर्मित बोलों के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं-

‘दारा’ अथवा ‘दिर’-दा अथवा रा को प्रायः लगभग एक-एक मात्रा काल का बोल माना गया है। दा और रा बोल को द्रुत लय में न बजाकर केवल मध्य लय में एक मात्रा काल से ही आघात करने से ‘दारा’ का बोल बनता है और इसी प्रकार दा रा को द्रुत लय में जल्दी से अर्थात् एक मात्रा काल में दोनों बोलों को एक साथ बजाने से ‘दिर’ बोल बन जाता है।

दाऽरा-जब दा प्रहार को एक मात्रा में तथा उसके साथ ही रा के बोल को केवल आधी मात्रा में बजाये तो ‘दाऽरा’ के बोल की उत्पत्ति होगी. सामान्यतः इस डेढ़ मात्रिक बोल को दो बार प्रयुक्त किया

¹ मिश्र, लालमणि, 'भारतीय संगीत वाद्य', प0 144

UGC-CARE enlisted & Indexed in EBSCO International Database of Journals

जाता है. दो बार बजाने से इस बोल का मात्रा काल तीन मात्रा का हो जाता है. इस बोल से जिस छन्दोबद्ध बोल का निर्माण होता है, वह इस प्रकार है-दाऽ रदा ऽर. इस प्रकार के बोल प्रायः रजाखानी अथवा द्रुत लय की बन्दिशों तथा तोड़ों में प्रयुक्त किये जाते हैं.

द्रा-जब 'दा' और 'रा' के बोलों को चौथाई मात्रा काल में बजाये या द्रि बोलों को ही आधी मात्रामें बजाये तो 'द्रा' बोल की उत्पत्ति होती है.

द्राऽऽर-दा और रा के एक चौथाई मात्रा काल में दा बजाने के बाद में आधी-आधी मात्रा काल को बजाकर रा को भी एक चौथाई मात्रा काल में बजाना होता है अर्थात् द्रा को बजाकर फिर रा के बोल का आघात आधी-आधी मात्रा काल के बाद ही लगाया जाता है. ऐसे बोल का वादन द्रुत गति के साथ ही करते हैं.

इसके अतिरिक्त उपर्युक्त बोलों से निर्मित चतुर्मात्रिक, षष्ठमात्रिक तथा अष्टमात्रिक बोल भी निर्मित होते हैं, जिनके कुछ उदाहरण यहाँ प्रस्तुत हैं-

चतुर्मात्रिकबोल –

दा (द्रि) दा रा
 (द्रि) (द्रि) दा रा
 दा रा (द्रि) (द्रि)
 दा (द्रि) (द्रि) (द्रि)

षष्ठमात्रिक बोल-

दारा दा दा रा दा
 दा रा दा (द्रि) दा रा
 दा (द्रि) (द्रि) (द्रि) दा रा
 दा रदा (र) (द्रि) दा रा

अष्टमात्रिक बोल-

दा (द्रि) दा रा दा रा (द्रि) (द्रि)
 दा (द्रि) (द्रि) (द्रि) दा रदा (र) दा
 दा रदा (र) (द्रि) दा (द्रि) दा रा

दा दिर दा र दा रु दा रा

सितार के बोलों के प्रयोग में अंगुलियों का बहुत बड़ा महत्त्व है। सितार में वाम हस्त की तर्जनी, मध्यमा और दक्षिण हस्त की तर्जनी का प्रयोग होता है, जिससे कि बोलों की बाँट में दक्षिण हस्त को वाम हस्त की भी सहायता प्राप्त होती है। सितार वादन में बोलों को बाँटने में 'दा रा' बोल सामान्य रूप से सर्वाधिक प्रयोग होते हैं। यही कारण है कि सितार के मुख्य बोल 'दा' और 'रा' ही माने गये हैं। अंगुलियों के इस संचालन के कारण ही वीणा वादन में प्रयुक्त क्रियाएँ जैसे-घात, पात, संलेख, उल्लेख, अवलेख, संधित, भ्रमर, छिन्न, नखकर्तरी, स्फुरित, खशिता, घोष, रेफ, कर्तरी, अर्धकर्तरी आदि में से सितार वादन में घात, पात, संलेख, उल्लेख, अवलेख, कर्तरी (कृन्तन), रेफ, घोष आदि का प्रयोग ही अधिक हो पाता है। प्रारम्भ में उपरोक्त समस्त क्रियाएँ सितार वाद्य को प्राप्त न थीं। उस समय का सम्पूर्ण वादन पूर्णतः बोलों पर आधारित था। वाम हस्त चालन के विशेष प्रचारमें आने के पश्चात् उपरोक्त वादन क्रियाएँ आज वीणा के समान ही वर्णित वाद्य में भी प्रयुक्त होती हैं। अतः सितार वाद्य में प्रयुक्त बोलों का आधार पूर्णतः वीणा वाद्य ही है और इसी वाद्य के वादन का अनुसरण कर सेनिया घराने के तन्त्री वादकों ने विभिन्न बोलों की सहायता से 12 प्रकार की छन्दोबद्ध क्रियाओं अर्थात् रचनाओं का निर्माण किया, जिनका वादन वादक अपने राग प्रस्तुतिकरण में करते हैं। सेनिया घराने के तन्त्री वादकों द्वारा सृजित विभिन्न बोलों की सहायता से निर्मित 12 प्रकार की छन्दोबद्ध रचनाएँ इस प्रकार हैं-

1. आलाप- इस क्रिया में 'दा' बोल का प्रयोग अधिक किया जाता है।
2. जोड़- इस क्रिया में 'दा' 'दार' और 'रदा' बोलों का मिश्रण कर वादन को अलंकृत किया जाता है तथा अभय हस्त चालन का प्रयोग इस क्रिया में अधिक किया जाता है।
3. गत- इस क्रिया में 'दिर' बोल का प्राधान्य होता है तथा 'दा दिर दा रा' और 'दार' को यथा स्थान प्रयोग कर गतों की बढ़त की जाती है।
4. तोड़ा- इस क्रिया में दिर दिर और दा र दा व द्रा दा का प्रयोग अधिक किया जाता है।
5. लड़ी- इस क्रिया में बोलों के छन्द प्रयोग किए जाते हैं। स्वरों की अपेक्षा बोलों का प्राधान्य रहता है।
6. गुत्थाव- इस क्रिया में वामहस्त और दक्षिण हस्त की अंगुलियों का संचालन प्रधान है तथा बोलों में दा रा दा बोल अधिक प्रयोग किया जाता है तथा बोलों को तीन या चार स्वरों में बाँटकर उन्हीं स्वरों का उलट-फेर कर लड़ी बना कर वादन करने का विधान है।
7. लड़-गुत्थाव- इस क्रिया हेतु क्रम सं० 5 व 6 अर्थात् लड़ी और गुत्थाव क्रिया को एक साथ स्वरों का मिश्रण कर बोलों में बाँट का विधान रखा गया है। इस क्रिया में दा रा और दिर यही बोल अधिक प्रयुक्त होते हैं।
8. लड़लपेट- इस क्रिया में 'दा, रा, दिर, दिर' इन चारों बोलों का यथोचित प्रयोग करते हैं तथा स्वरों का भी प्रयोग मान्य है।

9. कत्तर- यह क्रिया विशेषतः रबाब वादकों की देन है जिसे सरोद वादक तथा सरोद घराने के सितार वादक व शिष्य अधिक प्रयोग करते हैं. इस क्रिया में 'रा' बोल का प्राधान्य है.

10. तारपरन- पखावज की परनों के अनुसार विभिन्न बोलों के कटाव से यह क्रिया की जाती है. इसमें लगभग सभी बोल यथा स्थान प्रयोग में आ जाते हैं.

11. झाला- यह क्रिया सितार वादन का एक अभिन्न अंग है . इसका प्रयोग प्रत्येक सितार वादक रागाभिव्यक्ति में करते हैं. इसमें समान रूप से दक्षिण हस्त द्वारा 'दा' और 'रा' के मिश्रण से छन्दों का निर्माण कर झाला वादन की क्रिया की जाती है. इस क्रिया में 'रा' बोल का प्राधान्य है.

12. ठोंक झाला-इस क्रिया में 'दार दा', 'दिर दा', 'दिर दिर', 'दा रा' का प्रयोग अधिक किया जाता है. चिकारी के तार की क्रिया साधारण झाले के समान ही रहती है. ठोंक झाले में विशेषकर जहाँ एक ओर विभिन्न बोलों का प्राधान्य है वहीं इन बोलों के साथ 'मींड़' एवं 'घसीट' जैसी क्रिया भी अपनायी जाती है. ठोंक झाला में बाज के तार पर 'रा' बोल भी ज्यादा बलपूर्वक प्रयोग होता है.

उपरोक्त 12 प्रकार की क्रियाओं का आधार 'बोल' ही माने गये हैं. अतः वर्तमान समय में प्रचलित सितार वादन में ये 12 प्रकार की छन्दोबद्ध रचनाएँ प्रयुक्त होती हैं. इन्हीं छन्दोबद्ध रचनाओं को अपने बुद्धि कौशल और नवीन कल्पनाओं से अलंकृत कर अन्य घराने के सितार वादकों ने भी अपने अपने बाज को नवजीवन प्रदान किया. मिजराब के विभिन्न बोलों को एक सूत्र में बाँधकर बजाने की प्रथा मसीतखानी बाज से आरम्भ हुई. इस गत का भराव ही मिजराब के छन्दों द्वारा किया जाता है. बोलों को एक निश्चित छन्दोबद्ध क्रम में बाँधकर एक विशेष गत वादन शैली की रचना की गयी. इसी गत वादन शैली को कालान्तर में मसीतखानी गत के नाम से जाना गया.¹ मसीत खाँ द्वारा रचित इस गत का प्रथम प्रयोग बोलों के विभाजन पर आधारित था. उन्होंने सर्वप्रथम अपनी गतों में बोल बाँट का नियम प्रस्तुत किया अर्थात् 'दा रा' और 'दिर' को कई रूप में नियोजित करने का सफल प्रयास किया. इस गत के बोल को क्रमशः 'दिर दा दिर दा रा, दा दा रा, दिर दा दिर दा रा, दा दा रा' में बाँटा गया. उ० मसीत खाँ ने बोलों के सहयोग से बोल बाँट की क्रिया के द्वारा एक निश्चित बोल बन्धान की गत को प्रचारित किया तथा इस गत शैली के प्रस्तुतिकरण की ओर विशेष ध्यान दिया. मसीतखानी गत के उपर्युक्त बोलों को क्रमशः पाँच-तीन, पाँच-तीन, मात्राओं का विभाजन करके बोल बन्धान युक्त इस छन्दोबद्ध गत की रचना की गयी. इस प्रकार तत्कालीन वादकों ने बोलों को अत्यधिक चमत्कारपूर्वक प्रस्तुत करके अपने वादन को और अधिक रोचक बनाया. सितार वादन पद्धति में आलाप, जोड़ बजाने के बाद उसी राग की गत बजाने की प्रथा थी तथा गतकारी में गत के ही विभिन्न बोलों को अलग-अलग स्थानों से उठाकर सम पर लाया जाता था.

¹मिश्र, रामावल्लभ, 'सितार के अविष्कार का इतिहास और विकास के चरण', पृ० 36

जिस समय मसीतखानी गत जयपुर, अलवर और झरझर में परिष्कृत किया जा रहा था, उसी काल में तन्त्री वादन का दूसरा बाज लखनऊ, काशी और जौनपुर में पनपकर सम्पूर्णता प्राप्त कर रहा था. मसीतखानी बाज के समान ही पूर्वी बाज अथवा रजाखानी बाज भी सितार का एक प्रमुख बाज माना गया है, जिसे वर्तमान में द्रुत गत भी कहते हैं. मसीतखानी और रजाखानी दोनों ही बाज एक दूसरे के पूरक हैं अन्तर मात्र इतना है कि मसीतखानी बाज ध्रुपद और बीन के नियमों पर आधारित बाज है तथा रजाखानी बाज ठुमरी, तराना और ख्याल के नियमों पर आधारित बाज है. रजाखानी बाज में मध्य और द्रुतगति की प्रधानता होने के साथ-साथ गतकारी में बोलों के कटाव पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है. इस बाज के वादन में मुख्यतः गत वादन के बीच में विभिन्न छोटे-छोटे स्वर समूहों का प्रयोग बोलों में बाँधकर किया जाता है. इस शैली के वादन में चिकारी व जोड़ झाला का काम बहुत ही कम होता है किन्तु दाहिने हाथ के बोलों का महत्व अधिक दृष्टिगोचर होता है. रजाखानी बाज का कोई निश्चित बोल नहीं है. इस बाज में 'दा' और 'रा' के बोल के अतिरिक्त 'दिर दा' 'दा -र दा' आदि बोलों के प्रयोग ने इस बाज को मसीतखानी बाज की अपेक्षा अधिक चंचल व भिन्न बना दिया. .

निष्कर्ष -उपरोक्त विवरण से यह स्पष्ट होता है कि सितार वाद्य पर जो भी वादनोपयोगी छन्दोबद्ध रचनाएँ होती हैं वह बोलों के सहयोग से ही निर्मित होती हैं, जिनका यथास्थान व यथोचित प्रयोग वादक अपने प्रस्तुतिकरण में करते हैं. वर्तमान युग में सितार एक ऐसा तन्त्री वाद्य है जिसमें कल्पना की उड़ान के लिए बड़ी गुंजाइश है. सुमधुर मूल स्वरों के साथ विभिन्न छन्दोबद्ध बोलों के सहयोग से अनेक सौन्दर्यात्मक अवयवों की सुन्दर अभिव्यक्ति होती है. सितार वादन में कलाकार विभिन्न बालों एवं छन्दोबद्ध रचनाओं के माध्यम से कलात्मक प्रस्तुतिकरण की एक अत्यन्त ही सुन्दर अभिव्यंजना प्रस्तुत करता है, जिसके अन्तर्गत आलाप, जोड़ के बाद विभिन्न प्रकार की गतों का वादन होता है जिसमें द्रुत गति के तानों और तोड़ों के साथ-साथ विभिन्न लयकारियों का भी प्रदर्शन होता है.

सन्दर्भ ग्रन्थ:

1. निगम, रेखा, *सितार की उत्पत्ति का विस्तृत विवेचन एवं सितार के बाज का विकास क्रम*, मानक पब्लिकेशन, नई दिल्ली
2. भार्गव, अंजना, *भारतीय संगीत शास्त्रों में वाद्यों का चिन्तन*, कनिष्क पब्लिशर्स, डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली (2002)
3. मिश्र, रामावल्लभ, *सितार के आविष्कार का इतिहास और विकास के चरण*, संगीत पत्रिका, जून 1976, पृ0 36
4. मिश्र, लालमणि, *भारतीय संगीत वाद्य*, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, (1973)
5. शर्मा, भगवत शरण, *सितार मालिका*, संगीत कार्यालय, हाथरस (1995)